IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 1, Issue 1 (Jan -Feb. 2011) 35-38
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

प्राचीन भारतीय वृष्टि विज्ञान

प्रो. राधाकान्त ठाकुर

भारत में वृष्टि विज्ञान के सम्बन्ध में कई सहस्र शताब्दियों से अन्वेषण होता आ रहा है। गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने वर्षा को समस्त प्राणियों के प्राण का आधार बताते हुए वर्षा होने के मूलभूत उपाय पर भी प्रकाश डाले हैं। जैसे-

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यः तस्माद् यज्ञो विशिष्यते॥

इस विज्ञान के प्रारम्भिक अन्वेषक गर्ग, पराशर, कश्यप, ऋषिपुत्र, सिद्धसेन आदि भारत के प्राचीन ऋषि हैं। ज्योतिष शब्दशास्त्र आदि के प्रवर्तक आचार्य पराशर सभी शास्त्रों में इस विज्ञान की ही प्राथमिकता देते हैं। चूँकि वृष्टि पर ही जीवन आधारित है। जैसे उनके वचन -

अन्नं हि धान्यसंजातं धान्यं कृष्या विना नहि॥।
तस्मात् सर्वं परित्यज्य कृषिं यत्नेन कारयेत्॥
वृष्टिमूला कृषिः सर्वा वृष्टिमूलं च जीवनम्।
तस्मादादौ प्रयत्नेन वृष्टिज्ञानं समाचरेत्॥ (कृषिपराशर)

प्राचीन भारतीय वृष्टि विज्ञान की एक महती विशेषता यह है कि होनेवाली वर्षा का ज्ञान वर्षाकाल से कई माह पहले ही हो जाता है। इसकी दूसरी भी विशेषता यह है कि इसमें वर्षा का निर्णय निर्मूल्य यन्त्रों की सहायता से तथा विविध पशु, पक्षी, कीट, जलचर आदि जीवों की चेष्टा से की गयी है। अतः यह विज्ञान भारत के जन-जन तक पहुँच गया है।

यद्यपि आधुनिक वैज्ञानिक भी सुमूल्य यन्त्रों की सहायता से आजकल वर्षा की सूचना दे रहे हैं, किन्तु वे वर्षा की सूचना वर्षा काल से कुछ ही क्षण पहले दे पाते हैं, जिससे कृषकों का बहुत बडा उपकार नहीं हो पाता है। अतः अभी भी कृषकों को कृषि करने के लिये प्राचीन भारतीय वृष्टि विज्ञान का ही सहारा लेना पडता है।

वृष्टिगर्भ से वृष्टि काल का ज्ञान

प्राचीन विद्वानों का मत है कि पहले वृष्टि के गर्भ धारण के बाद साढ़े छः महीने में यानी 195 सौर दिनों में उस वृष्टि गर्भ का परिपाक होता है। अतः वृष्टि गर्भ काल के साढे छः महीने के बाद उस वृष्टि गर्भ का प्रसव होता है। गर्ग, कश्यप आदि के मत से अग्रहण शुक्ल प्रतिपदादि में जब चन्द्रमा पूर्वाषाढ नक्षत्र में पहुँचता है तब वृष्टि गर्भ का धारण होता है। गर्ग की उक्ति-

शुक्लादौ मार्गशीर्षस्य पूर्वाषाढव्यवस्थिते।
निशाकरे तु गर्भाणां तत्रादौ लक्षणं वदेत्॥

वृष्टिप्रसवकाल हेतु उनकी उक्ति –

दिवा भवति यो गर्भो रात्रौ स इति पच्यते।
शुक्लपक्षे समुद्भूतः कृष्णे पक्षे च वर्षति॥ इत्यादि।

कभी-कभी वृष्टिगर्भ असफल भी हो जाते हैं, जिसके लक्षण वराहमिहिर ने निर्दिष्ट किये हैं। जैसे –

गर्भसमयेऽतिवृष्टिर्गर्भाभावाय निर्निमित्तकृता।
द्रोणाष्टांशेभ्यधिके वृष्टेः गर्भः स्रुतो भवति॥

वायुगति से वृष्टि ज्ञान –

पराशर पौष मास की वायु –गति के परीक्षण से सम्पूर्ण वर्ष की वर्षा के ज्ञान करने के उपाय बतायें हैं। यानी पौष मास के बारह भाग करके प्रत्येक भाग की वायु-गति से एक एक महीने की वर्षा का निर्देश किया गया है।

वराहमिहिर ने तो श्रावण, भाद्रपद, आश्विन एवं कार्तिक मासों की वर्षा का ज्ञान आश्विन शुक्लपक्ष में रोहिणी नक्षत्र पर चन्द्रमा रहने पर वायुगति के परीक्षण से किया है। यद्यपि कई प्रकार के वायुपरीक्षण के द्वारा वर्षा का निर्णय करना कृषकों के बीच प्रसिद्ध है। जैसे अभी भी यहाँ के कृषकगण होलिका दाह काल में धुएँ की गमन दिशा से अग्रिम वर्ष की वृष्टि का अनुमान करते हैं।

ग्रह संचार से वृष्टिज्ञान

ग्रह संचार वृष्टि का प्रमुख कारण है। यद्यपि सूर्य सभी ग्रहों में प्रमुख है, वर्षा करने में भी प्रमुख सहायक ग्रह वही है। यदि सूर्य एवं पृथ्वी की दूरी एवं दक्षिणोत्तर अन्तर में परिवर्तन न हो, तो ऋतु परिवर्तन ही रुक जायेगा। अतः सूर्य का संचार या पृथ्वी का संचार वर्षा का मुख्य कारण होता है। सूर्य एवं पृथ्वी के अन्तर की विभिन्नता के कारण तापक्रम आदि की विभिन्नता स्वाभाविक ही है। सूर्य के संचार से वर्षा का ज्ञान करना भी हमारे देश में प्रसिद्ध ही है। जैसे अभी भी जल के लिये व्याकुल कृषक बहुत ही आशा एवं विश्वास से सूर्य के आर्द्रा नक्षत्र में प्रवेश एवं हस्त नक्षत्र से निर्गमन काल की प्रतीक्षा करते हैं। सूर्य के संक्रमण आदि काल में वर्षा की सम्भावना होती है। जैसे वराहमिहिर ने कहा है –

प्रायो ग्रहाणामुदयास्तकाले समागमे मण्डलसंक्रमे च।
पक्षक्षये तीक्ष्णकरायनान्ते वृष्टिर्गतेऽर्के नियमेन चार्द्राम्॥ (बृ.सं.)

वृष्टि होने एवं नहीं होने में अन्य ग्रहों के संचार भी कारण होते हैं। जैसे ग्रहस्थिति से वृष्टि ज्ञान -

अग्रतः पृष्ठतो वापि ग्रहाः सूर्यावलम्बिनः।
यदा तदा प्रकुर्वन्ति महीमेकार्णवामिव॥ (बृ.सं.वर्षणाध्याय)
चलत्यङ्गारके वृष्टर्ध्रुवा वृष्टिः शनैश्चरे।
वारिपूर्णां महीं कृत्वा पश्चात् संचरते गुरुः॥
ग्रहाणामुदये चास्ते तथा वक्रातिचारयोः।
प्रायो वर्षन्ति हि घना नृपाणामुद्यमेव च॥
कुजपृष्ठगतो भानुः समुद्रमपि शोषयेत।
स एव विपरीतस्तु पर्वतानपि प्लावयेत्॥

कौएँ की घोंसले से वृष्टि ज्ञान

कौएँ को वर्षाकाल से कुछ माह पहले ही होनेवाली वर्षा का ज्ञान हो जाता है। अतः वह ग्रीष्म ऋतु के प्रारम्भ में अपने प्रसव के लिये घोंसले का निर्माण अग्रिम वर्षा के आधार पर ही वृक्ष के भाग विशेष में करता है। जैसे गर्ग के वचन-

वृक्षस्य पूर्वशाखायां वायसः कुरुते गृहम् ।
सुभिक्षं क्षेममारोग्यं सुवृष्टिः सस्य सम्पदा ॥
अग्निकोणस्य शाखायां वायसः कुरुते गृहम् ।
दुर्भिक्षं च विजानीयान्नैव वर्षति माधवः ।
दक्षिणे यदि शाखायां वायसः कुरुते गृहम् ।
हाहाकारं महारौद्रं विग्रहं च समादिशेत् ॥ (मेघमाला)

तात्कालिक वृष्टिज्ञान

प्राचीन भारतीय वृष्टि विज्ञान में तत्कालिक वृष्टि यानी वर्षाकाल से कुछ क्षण पहले वर्षा का ज्ञान भी किया गया है। जैसे नारद के वचन-

पिपीलिका यदाण्डानि गृहीत्वोच्चैः प्रयान्ति वै ।
सर्पा वृक्षं यदा यान्ति तदा बहुजलप्रदा ॥
गावः सूर्यं निरीक्षन्ति कृकलासगणास्तथा ।
गृहान्नेक्षन्ति पशवो निर्गमं कुक्कुरास्तथा ॥ (मयूरचित्रक)

वृष्टिज्ञान के लिये प्राचीन काल में वराहमिहिर ने तुला प्रयोग विधि, गर्ग ने कुम्भ प्रयोग विधि भी कहा है।

कृषकों को संस्कृत ज्ञान नहीं रहने के कारण इसी प्राचीन भारतीय वृष्टि विज्ञान का क्षेत्रीय भाषाओं में भी अनुवाद किया गया है। जैसे मैथिलि में डाक वचन, हिन्दी में घाघभड्कुरी के वचन और तमिल में करनपथु ग्रन्थ है।